शोध मंथन Vol. XIV No.II Apr.-June 2023 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Impact Factor 8.870 (SJIF)

पुराणों में पर्यावरण दर्शन

प्राप्तिः 08.05.2023
स्वीकृतः 25.06.2023

प्रशांत राणा
शोधार्थी, इतिहास विभाग
जे०वी० जैन कालेज, सहारनपुर, (उ०प्र०)
ईमेलः *prashantranakatla@gmail.com*

44

सारांश

पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा अत्यंत प्राचीन काल से भारतीय जीवन, धर्म व संस्कृति का मुख्य अंग रही है। प्राचीन काल से भारतीय धार्मिक दर्शन में पर्यावरण समर्थित जीवन अंगीकार हुआ है। यह पर्यावरण व मानव जीवन को अभिन्न मानता है। भारतीय दार्शनिकों ने पर्यावरण व प्रकृति के संरक्षण व संवर्धन पर बल दिया है। पौराणिक साहित्य में प्रकृति का सृजनकर्ता व पालनकर्ता ईश्वर को बताया गया है। अग्नि पुराण में उल्लेखित है कि ईश्वर समय–समय पर पर्यावरण–प्रकृति के संरक्षण के उपाय करते रहते हैं। वायु पुराण में प्रत्येक पर्यावरणीय घटकों में ईश्वरीय अंश बताकर उन्हें देवताओं की संज्ञा से विभूषित कर पूजनीय बताया गया है। भविष्य पुराण के अनुसार यदि मनुष्य भौतिकवाद व लाभ के वशीभूत होकर प्राकृतिक स्त्रोतों का अति दोहन करेगा तो उसके प्रतिकूल परिणामों का स्वयं उत्तरदायी होगा। यदि मनुष्य प्रकृति में व्यवस्थित व शांतिपूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहता है तो उसे पर्यावरण–प्रकृति के संरक्षण व संवर्धन नियमों का पालन करना पड़ेगा अन्यथा पश्चिमी संस्कृति की तरह उसे गंभीर परिणाम भुगतने पड़ेंगे। पद्म पुराण में वर्णित है–

यज्ञेनप्यायिता देवा वृष्ट्युत्सर्गेण मानवाः। आप्यायनवैकुर्वतिं यज्ञाः कल्याणहेतवः।।

मुख्य बिन्दु

पर्यावरण–प्रकृति, ईश्वर, संवर्धन, पौराणिक, प्राकृतिक घटक, देव, धर्म।

भारतीय संस्कृति में अनादि काल से लेकर पर्यावरण संरक्षण का भाव चिंतन परंपरा में रहा है। पौराणिक काल से लेकर मध्यकाल व आधुनिक काल तक यह परंपरा निरन्तर चलती रही है। वैदिक ऋषियों ने पर्यावरण–प्रकृति पर चिंतन करते हुए सृष्टि को जिस रूप में देखा व जिस भाव से समझा उसका वर्णन वेदों, उपनिषदों व पुराणों में उपलब्ध होता है। ऋग्वेद संहिता में मंत्र है–

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे (ऋग्वेद, 10/121/1)

जिसका अर्थ है सर्वप्रथम जीवों का स्वामीभूत हिरण्यगर्भ अस्तित्व में आया और उसी से सृष्टि का निर्माण हुआ। पौराणिक साहित्य में हम देखते हैं कि कई पुरणों के नाम प्राकृतिक घटकों जैसे– अग्नि, वायु, पद्म अर्थात कमल, कूर्म अर्थात कछुआ, मत्स्य अर्थात मछली आदि के नाम पर रखे गए हैं। इसका उद्देश्य समाज में पर्यावरण संरक्षण को धर्म की पवित्रता द्वारा स्थापित करना है।

प्राचीन वैदिक ऋषियों व विद्वानों ने पर्यावरणीय उपकारक तत्वों को दवतुल्य बताकर उनके महत्व को अभिव्यक्त किया है व मानवीय जीवन में उनके महत्व को स्वीकार किया है। पर्यावरण को संतुलित रखने वाले महत्वपूर्ण देवता जैसे– सूर्य, वायु, अग्नि, जल से मानव की रक्षार्थ हेतु कामना की गई हैं।[1]

अग्नि पुराण में मंदिर निर्माण की महत्ता पर बल दिया गया है। मंदिर पारिस्थिति की तंत्र का लघु रूप होते हैं क्योंकि मंदिरों के पास जलाशय, विभिन्न पेड़–पौधे, वन्य जीव, पशु–पक्षी गतिविधिव कार्यपर्यावरण संरक्षण व वृद्धि पर बल देता है और वृक्षारोपण को प्रोत्साहित करता हैं।[2]

अग्नि पुराण में उल्लेख है कि भगवान विष्णु ने वराह अवतार धारण कर पृथ्वी को अपने दांतों पर उठाया था व जगत का कल्याण किया था। भगवान विष्णु पद्म व शंख धारण करते हैं जो उनके प्रकृति प्रेम व संतुलन को प्रदर्शित करता है। उन्तालीसवें अध्याय में वर्णन मिलता है कि देवी दुर्गा, सिंह की सवारी करती है व सिंह पारिस्थितिकी तंत्र में पर्यावरण संतुलन हेतु सर्वोच्च पद पर आसीन उच्च मांसाहारी जीव होता है।

अग्नि पुराण के 73 वें अध्याय में सूर्य देव की महिमा व पूजा का वर्णन प्राप्त होता है, जो जैवमण्डल व पर्यावरण का सबसे बड़ा ऊर्जा प्रदान करने वाला स्त्रोत है। यह बात प्राचीन ऋषि–मुनि मर्म से जानते थे इसलिए उन्होंने सूर्य को दैवीय रूप प्रदान कर उसे वंदनीय बताया है।[3]

अग्नि पुराण में श्री विष्णु द्वारा जल की उत्पत्ति का उल्लेख मिलता है जो आगे चलकर सृष्टि अर्थात प्रकृति का कारण बना। प्राचीन हिंदू धार्मिक साहित्य में प्रकृति को वर्तमान के पर्यावरण का समानार्थी शब्द माना जाता है। पुराणों में जल का अत्यधिक महत्व है उसे पूजा के विधि विधान में सम्मिलित किया गया है व जल के संग्रह निकाय की स्वच्छता व निर्मलता पर अत्यधिक बल दिया गया है।

पुराणों में अग्नि, जल, पृथ्वी, वायु, आकाश को पवित्र मान कर उन्हें पूजनीय बताया गया है। अग्नि पुराण में पूजा हेतु सैकड़ों विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों को सम्मिलित करना आवश्यक बताया गया है वह उनके संरक्षण पर विशेष बल दिया गया है जो कि पर्यावरण हितैषी कार्य है।[4]

शिव महापुराण में वर्णन मिलता है कि भगवान शिव का वास हिमालय के कैलाश पर्वत पर है और वृषभ उनकी सवारी है जिसका नाम नंदी है। देवी पार्वती हिमालय की पुत्री हैं और उन्होंने हिमालयी फलों को खाकर वन में शिव आराधना की थी। शिव का प्रतीक शिवलिंग जो पाषाण निर्मित है अर्थात प्रत्येक पाषाण में, पर्वत में, पृथ्वी में शिव विराजमान हैं।

भगवान शिव नाग को धारण करते हैं और मर्गधाल ओढ़ते हैं जो प्रतीक है कि नागों में शिव तत्व विद्यमान है व मृगछाल से अर्थ निकलता है कि प्रकृति में बहुतायत साधनों व भागों की साम्रगी उपलब्ध होने पर भी न्यूनतम उत्पाद ग्रहण करना। शिव गंगा व चंद्रमा को धारण करते हैं और दोनों ही पर्यावरण के घटक हैं। गंगा नदी उत्तरी भारत की जीवन प्रदायिनी नदी है वही चंद्रमा की चांदनी वनस्पतियों को रस प्रदान करती है जिनसे उसका विकास संभव है।

उपरोक्त पुराण के अनुसार शिव से सर्वप्रथम जल उत्पन्न हुआ इसके उपरांत कमल का फूल जो वनस्पति का प्रतीक है, उत्पन्न हुआ और फिर बीज प्रदाता रूपी ब्रह्मा ने संपूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति

की। उपरोक्त बातों से यह स्पष्ट होता है कि शिव प्रकृति व पर्यावरण के पर्यायवाची हैं, अतः पर्यावरण का संरक्षण करना चाहिए। शिव की पूजा में जल, पुष्प, बेलपत्र का विशेष प्रयोग है। वैदिक साहित्य में शिव को रूद्र रूप में पशुओं का देवता भी कहा गया है। व सिंधु घाटी सभ्यता की मोहरों से आदियोग शिव के चित्रांकन मिले हैं जो जंगली पशुओं से घिरे हुए हैं।[5]

पद्म पुराण के 42 वें अध्याय में तालाब खुदवाने, वृक्ष लगाने, गोचर भूमि निर्माण के विषय में विस्तृत रूप से दिया हुआ है। इसमें कहा गया है कि तालाब खुदवाने वाले मनुष्य सहस्त्रों वर्षों तक स्वर्ग में सुख पूर्वक रहते हैं और जल को अत्यंत पवित्र बताया गया है।

कुआं खोदने वाले मनुष्य को देवताओं की श्रेणी में रखा गया है। जलाशय के चारों ओर वृक्षों को लगाने का वर्णन किया गया है व पीपल के वृक्ष को लगाना अत्यंत पवित्र कार्य बताया गया है। सड़कों, रमणीय स्थानों, जलाशयों, कुओं के निकट व बाजारों में वृक्ष लगाने का प्रावधान किया गया है व पीपल वृक्ष काटने वाले को नारकीय जीवन भोगने का वर्णन मिलता है।[6]

स्कंद पुराण में समुद्र मंथन की कथा का उल्लेख मिलता है जिसमें वर्णन है कि जब देवताओं की शक्तियां कम हो गई तब उन्हें भगवान ब्रह्मा ने समुद्र मंथन करने को कहा व इससे विभिन्न दिव्य वनस्पतियां, पशु–पक्षी, भोग्य पदार्थ व जीव उत्पन्न हुए जिनका भोग व वितरण करने पर देवता पुनः अत्यंत शक्तिशाली हो गए।

इसका सीधा अर्थ यह जाता है कि प्रकृति देवताओं से भी उच्च स्थिति पर है, जो मनुष्यों के साथ–साथ देवताओं को भी जीवन ऊर्जा प्रदान करती रहती है। देवताओं ने पृथ्वी के विभिन्न घअकों जैसे– समुद्र, मंदराचल पर्वत, वासुकी नाग, विष्णु रूपी कछुआ आदि से विनती की तब जाकर उनके समुद्र मंथन के मनोरथ सिद्ध हुए। ठीक इसी प्रकार मनुष्य को प्रकृति पर्यावरण–प्रकृति को दिव्य मानकर उनके संरक्षण व संवर्धन का ध्यान रखना चाहिए।[7]

मत्स्य पुराण में महेंद्र, मलय, सह्याद्रि, शक्तिमान, ऋक्षवान, विंध्यव पारियात्र पर्वत पुण्य प्रदान करने वाले बताए गए हैं। गंगा, यमुना, सरस्वती, सिंधु, गोदावरी, नर्मदा, कावेरी नदियों को मोक्ष प्रदाता कहा गया है। इन्हें अत्यंत पवित्र व शीतल जल प्रदाता नदी कहा गया हैं। भारत की सभी नदियों को पवित्र व माता की उपमा प्रदान की गई है। सह्याद्री वन को विश्व की सबसे सुंदर पर्वत श्रृंखला कहा गया है।

मत्स्य पुराण में सर्वप्रथम मनु का अवतरण भारत में बताया गया है जो कि सभी मनुष्य जाति के पिता थे। इसी भूमि को दिव्य व भगवान की अवतरण भूमि बताया गया है। भारत की प्रकृति व पर्यावरण के सभी घटकों व अंगों को देव तुल्य मानकर उनके प्रति अत्यंत श्रद्धा का भाव व्यक्त किया गया है।

इस पुराण में जम्बु वृक्ष (जामुन) को दिव्य पेड़ की उपमा प्रदान की गई है। इसके फल का भोग करने वाला शतायु निर्दिष्ट किया गया है। यदि आधुनिक वैज्ञानिक काल के परिप्रेक्ष्य में देखें तो जामुन फल मधुमेह, रक्तचाप, कैंसर इत्याद गंभीर बीमारियों से रक्षा करता है।[8]

वायु पुराण षष्ठ अध्याय में सृष्टि की उत्पत्ति का वर्णन है कि पृथ्वी की उत्पत्ति जल से हुई व ईश्वर ने पर्वतों, नदियों, समुद्रों का निर्माण किया उसके बाद पंचमहाभूतों से जीवों, वनस्पतियों की उत्पत्ति की और वर्तमान में भी उसका संचालन कर रहे हैं। सभी ग्रहों, आकाशगंगाओं, नक्षत्रों, सूर्य

व चंद्रमा का निर्माण ब्रह्मा ने किया है और उनकी इच्छा से सभी ग्रह व नक्षत्र अपने परिभ्रमण मार्ग पर गतिमान हैं।[9]

भविष्य पुराण में सूर्य को वैदिक धर्म में प्रत्यक्ष देवता माना गया है। मिस्र की सभ्यता की भांति ही पुराणों में भी सूर्य को ईश्वर माना गया हैं व विशेष पूजा विधि, विधान बताए गए हैं। यदि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखें तो सूर्यसंपूर्ण पर्यावरण–प्रकृति का सर्वोच्च ऊर्जा स्रोत है। सूर्य के बिना पृथ्वी व ग्रहमण्डल की परिकल्पना भी व्यर्थ है। सूर्य को ईश्वर मानने का प्रत्यक्ष अर्थ है कि पर्यावरण पूजनीय व आराधनीय है जिसकी सेवा करने का शुभ फल प्राप्त होता हैं।[10]

पुराण दिग्दर्शन ग्रंथ में राजा बलि व भगवान विष्णु की कथा का उल्लेख मिलता है जिसमें राजा बलि स्वयं को संपूर्ण पृथ्वी का एकमात्र स्वामी व भोक्ता मान बैठता है तब भगवान विष्णु ने वामन रूप धारण कर दान हेतु मात्र तीन पग जमीन राजा से मांगी व इन्हीं तीन पगों में संपूर्ण पृथ्वीमंडल, जलमंडल व वायुमंडल को मापकर अपने अधीन कर लिया और राजा बलि को मात्र साधारण प्राणी बना दिया।

राजा बलि की भौमिकवादी स्वामी होने की मुख्य धारणा को भगवान ने खंडित कर दिया वआम जनमानस को प्रत्यक्ष संदेश दिया कि संपूर्ण पृथ्वी एवं पर्यावरण मात्र ईश्वर के अधीन है मनुष्य के नहीं। मनुष्य पृथ्वी पर जीवन यापन करने वाला मात्र एक प्राणी है, इसके अतिरिक्त कुछ नहीं। प्रत्येक प्राकृतिक घटक ईश्वर का अंश है व ईश्वर की इच्छा से निरंतर कार्य करते हैं इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह पृथ्वी की अत्यधिक भोग करने की अवधारणा को बदल, अपना जीवन संयम से जीये।[11]

सनातन हिंदू धर्म में प्रकृति को देवी के रूप में स्थापित किया गया है। वेदांत दर्शन में कहा गया है कि आपः शांति, वायु शांति, अग्नि शांति, पृथ्वी शांति, सर्वांग शांति अर्थात प्रकृति के सभी उपादानों की उपासना सर्वत्र शांति के लिए की गई है। इस प्रकार कहा गया है कि यदि प्रकृति का अत्यधिक शोषण या दोहन होता है तो पर्यावरण दूषित होकर मनुष्य जाति का जीवन संकट में डाल देता है। पौराणिक शास्त्रों, उपनिषदों, पुराणों आदि में अग्नि, जल, वायु, भूमि आदि की पूजा व उपयोगिता का प्रावधान किया गया है। इसके अतिरिक्त पीतल, तुलसी आदि के पेड़–पौधों को देवतुल्य समझकर उनकी आराधना का विधान रखा गया है। अग्नि, जल, वायु, सूर्य व पृथ्वी को अर्घ्य देने के तथा यज्ञ के माध्यम से आहुति देने पर इंद्रदेव प्रसन्न होकर वर्षा करते हैं, ऐसी मान्यता सनातन हिंदू धर्म में मानी गई है जो किसी न किसी रूप में वातावरण को शुद्ध करने से जुड़ी हुई है।[12]

पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा अत्यंत प्राचीन काल से भारतीय जीवन, धर्म व संस्कृति का अंग रही है। प्राचीन काल से भारतीय धार्मिक दर्शन में पर्यावरण उन्मुख जीवन का समर्थन हुआ है। यह पर्यावरण व मानव जीवन को अभिन्न मानता है। पर्यावरण के द्वारा मनुष्य जीवन का आरंभ हुआ है वह अंत में पर्यावरण में ही विलीन हो जाता है। भारतीय जीवन में पर्यावरण की कल्पना जीवित संसार है व मानव भी उन्हीं में से एक है। भारतीय दार्शनिों ने पर्यावरण प्रकृति की सुरक्षा को मनुष्य का मूल कर्तव्य माना है। भारतीय शास्त्रीय परंपरा कल्पना करती है कि मनुष्य शरीर नौ तत्वों से निर्मित है जो मृत्योपरांत पुनः प्रकृति में विलीन हो जाते हैं। सामान्यतः वो नौ तत्व होते हैं–

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, बुद्धि, इंद्रिय विषय और इच्छाएं।[13]

वैदिक देवता नामक ग्रंथ में वर्णन है कि चंद्रमा पादपों व औषधियों का राजा है क्योंकि चंद्रमा की किरणें से वनस्पतियां रस ग्रहण करती हैं वह प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया रात्रि के समय करती हैं।14 यह बात वर्तमान युग में भी वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर पूर्ण सिद्ध होती है।

वराह पुराण में वर्णन है कि सृष्टि के निर्माण के आरंभ में एकमात्र शक्ति श्री विष्णु थे। उन्होंने सूर्य की उत्पत्ति की फिर जल व पृथ्वी की उत्पत्ति की, तदोपरांत संपूर्ण जीव–जंतुओं, वनस्पतियों, पर्वतों, मैदानों नदियों, इत्यादि की रचना की। उन्होंने ही वायु की उत्पत्ति की, दिन व रात बनाए, समुद्र में जलीय जीवों की उत्पत्ति की, इसी प्रकार सभी वस्तुओं व जीवों का कल्प आरंभ हुआ। भगवान की इच्छा से यह कल्प बारम्बार नष्ट व उत्पन्न होता रहता है।[15]

उपरोक्त वाक्यों से यह अर्थ लगाया जा सकता है कि समूची सृष्टि पंचमहाभूत अग्नि, जल, पृथ्वी, वायु और आकाश से निर्मित है। यही पंचतत्व मिलकर समूचे विश्व व ब्रह्माण्ड के जड़ व चेतन हैं। यदि जीवनदायी पर्यावरण के घट शुद्ध और संरक्षित रहे तो जीवन भी सुरक्षित रहेगा अन्यथा नहीं। इन पांच तत्वों का सम्मिलित स्वरूप ही पर्यावरण है। पर्यावरण का संतुलन ही जीवन चक्र को नियंत्रित करता है और इसमें गतिरोध आते ही जीवन संकट में पड़ जाता है।

वैदिककालीन महर्षिगणों ने इसकी आवश्यकता और महत्व को ध्यान में रखकर इसे शुद्ध व संरक्षित रखने हेतु नियम बनाए हैं। पुराणों में पृथ्वी का रस जल को बताया गया है और जल का रस औषधियों को बताया गया है। पौराणिक मान्यताओं के अनुरूप ही पीपल, पालाश, नीम, अशोक, बरगद, कदंब व आंवला के वृक्षों को देवताओं के सदृश पूजा जाता है। इन सभी उपकरणों व प्रयासों के पीछे पर्यावरण को संरक्षित करने की विशेषता झलकती है।[16]

निष्कर्ष

पौराणिक साहित्य के अनुसार प्रत्येक पर्यावणीय घटक ईश्वर द्वारा ही उत्पन्न व प्रदत्त है क्योंकि मनुष्य जो भी प्रकृति से प्राप्त करता है वास्तव में वह ईश्वर से ही प्राप्त करता है। पृथ्वी पर विद्यमान प्रत्येक जैव–अजैव वस्तु, प्राणी व वनस्पति जगत भगवान के अंश हैं इसलिए मनुष्य को उनके प्रति कृतज्ञपूर्ण होकर बदले में इनका संरक्षण व संवर्धन करना चाहिए।

पौराणिक साहित्य ने भारतीय संस्कृति को प्रकृति प्रेमी बनाया है। पुराणों के अनुसार वनस्पति, प्राणी एवं जगत के प्रति सम्मानीयव पूजनीय भाव रखकर ईश्वरीय पूजा का भाव उत्पन्न कर मनुष्य अपना कल्याण प्रशस्त करता है। अग्नि पुराण के तृतीय अध्याय में भगवान श्री राम का जीवन वन्यजीवों व घटकों पर आश्रित दिखाया गया है। वहीं सत्रहवें अध्याय में मंदिर को लघु पारिस्थितिकी–तंत्र बताया गया है।

पद्म पुराण के बयालीसवें अध्याय में तालाब, झील, नहर निर्माण व वृक्षारोपण करने वाले मनुष्य को स्वर्ग का उत्तराधिकारी घोषित किया गया है व उसका स्थान देवताओं के समकक्ष रखा गया है। वायु पुराण के चतुर्थ अध्याय में सृष्टि की उत्पत्ति व ईश्वर द्वारा प्राकृतिक घटकों के निर्माण का उल्लेख प्राप्त होता है।

मत्स्य पुराण के सृष्टि प्रकरण में नदियों को माता का स्वरूप प्रदत्त किया गया है तो जामुन वृक्ष की दैवीय वृक्ष से तुलना का वर्णन प्राप्त होता है। स्कंद पुराण के अध्याय षष्ठ में समुद्र मंथन की कथा का वर्णन मिलता है जिसके द्वारा देवता अपनी नष्ट शक्तियों को प्रकृति से प्राप्त कर अमर हो जाते हैं। पुराण दिग्दर्शन ग्रन्थ में राजा बलि का पृथ्वी का स्वामी होने का मिथ्या अहंकार श्रीविष्णु द्वारा टूटता दिखाया गया है।

जिकसा प्रत्यक्ष संकेत है कि प्रकृति ईश्वरीय सम्पत्ति है मनुष्य यहाँ मात्र जीवन यापन करने वाला प्राणी हैं न कि सर्वभोक्ता व शोषणकर्ता। पर्यावरणीय घटक ईश्वर के अधीन है जिसे जब चाहे प्रभु बदल सकते हैं उनका संरक्षण व संवर्धन का सकते हैं। मनुष्य को चाहिये कि पृथ्वी के अत्यधिक भोग करने की लालसा को त्याग कर अपना जीवन संयम व शालीनता के साथ जीये।

भारतीय जीवन में पर्यावरण की कल्पना जीवित संसार है वह मानव भी उन्हीं में से एक है। भारतीय विद्वान, ऋषि–मुनियों ने सदैव प्रकृति को ईश्वरीय अंश बताकर उसकी पूजा करने का प्रावधान किया है व प्रत्येक उस कार्य व गतिविधि को अधर्म बताया है जिससे वृक्षों, पादपों, भूमि, वन्यजीवों, जल, नदियों, वायु इत्यादि में प्रदूषण या अवांछित बदलाव हो। पौराणिक साहित्य की पर्यावरण संरक्षण की विचारधारा वर्तमान में विकट हो रही प्रदूषण की समस्या के निदान हेतु अत्यंत लाभकारी है। इसी कारण प्राचीन वैदिक साहित्य में निरंतर शोध कार्य चल रहे हैं।

भारतीय परंपरा में धर्म, नैतिकता, कर्तव्य परायणता के समुच्चय से प्रकृति सदैव आदिकाल से लेकर वर्तमान तक पूजनीय रही है व ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी स्थानीय निवासी विभिन्न वृक्षों, वन्यजीवों में ईश्वरीय अंश मान उनके संरक्षण पर ध्यान देते हैं।

पीपल, बरगद, शमी, आंवला, तुलसी व नीम इत्यादि के पेड़; पौराणिक काल से लेकर वर्तमान तक दिव्य वृक्ष की श्रेणी में स्थित हैं व वर्तमान में भी आमजन इनके प्रति धर्म का भाव रखकर इनका संरक्षण व संवर्धन कर रहे हैं।

इन वृक्षों को काटना या हानि पहुंचाना वर्तमान युग में भी अधर्म व नारकीय कार्य माना जाता है। इसलिए यदि कहा जाए कि पौराणिक साहित्य ने 2600 वर्षों से प्रकृति संरक्षण का कार्य किया है तो यह अतिश्योक्ति न होगी और वर्तमान में भी यह अपने लाभकारी मार्ग पर चल रहा है। सनातन भारतीय परंपरा से आबद्ध प्रत्येक व्यक्ति पुराणों के निर्देशों व कथनों को स्वीकार कर प्रकृति–पर्यावरण कल्याण की दिशा में अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

संदर्भ

1. सिंह, आशुतोष. (2021). पर्यावरण संरक्षण का वैदिक व पौराणिक चिंतन. लेख–नवभारतटाइम्स. 22 जनवरी।
2. अग्निपुराण. (2020). तृतीय व अष्ट अध्याय. गीता प्रेसः गोरखपुर. पृष्ठ **4–15.**
3. वही. पचासवां अध्याय. पृष्ठ **100–103.**
4. शिव महापुराण. (1962). गीता प्रेसः गोरखपुर. पृष्ठ **81–85.**
5. श्रीवास्तव, के0सी0. (2011). प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति. यूनाइटेड बुक डिपोः प्रयागराज. पृष्ठ **61.**

6. गोयन्दका, जयदयाल. (1994). पद्मपुराण. गीता प्रेसः गोरखपुर. पृष्ठ 193—196.
7. (1951). स्कंदपुराण. गीता प्रेसः गोरखपुर. पृष्ठ 22—23.
8. शर्मा, पं0 श्रीराम. मत्स्य महापुराण. संस्कृति संस्थान. बरेली. पृष्ठ 378—383.
9. शास्त्री, रामप्रताप त्रिपाठी. (1987). वायु पुराण. हिंदी साहित्य सम्मेलनः प्रयागराज. पृष्ठ 46—56.
10. (1992). भविष्य पुराण. गीता प्रेसः गोरखपुर. पृष्ठ 26.
11. शास्त्री, पं0 माध्वाचार्य. पुराण दिग्दर्शन. मानव पुस्तकालयः कमलानगर, दिल्ली. पृष्ठ 467—468.
12. बोहरा, डा0 नवीन कुमार. (2021). धर्म और पर्यावरण. लेख—पंजाब केसरी. 25 नवंबर।
13. ग्यानकोश, इग्नू ई0. अध्याय 7, भारतीय दर्शन और पर्यावरण. डिजीटल लाइब्रेरी ऑफ इण्डिया।
14. त्रिपाठी, डा0 गयाचरण. (1981). वैदिक देवता. भारतीय विद्या प्रकाशनः वाराणसी. पृष्ठ 57.
15. (2017). श्रीवराहपुराण. गीता प्रेसः गोरखपुर. पृष्ठ 21.
16. नेगी, पूनम. (2018). पर्यावरण संरक्षण की वैदिक दृष्टि. भारतीय धरोहर पत्रिका. 21 मई. http://www.bhartiyadharohar.com